International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 138-140

सूतसंहिता में शब्दप्रमाणचिन्तन

ग्रीन अवस्थी
शोधच्छात्र, संस्कृतविभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रस्तावना

प्र उपसर्गपूर्वक 'माङ्' धातु से ल्युट्प्रत्यय के योग से प्रमाणशब्द व्युत्पन्न होता है। जिसका अर्थ है- सम्यक्तया सिद्ध करना।[1] दार्शनिक व्याख्या के अनुसार प्रमा का करण ही प्रमाण कहलाता है। प्रमा का करण अर्थात् जो साधनरूप से प्रमा की सिद्धि में उपयुक्त होता है, उसे प्रमाण कहते हैं। प्रमाणों की संख्या के विषय में भारतीय दर्शनों में अनेक मत हैं। आस्तिक दर्शनों में वैशेषिकदर्शन दो प्रमाण (प्रत्यक्ष और अनुमान) स्वीकार करता है। सांख्यदर्शन और योगदर्शन तीन प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द) मानते हैं। न्यायदर्शन चार प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द) तथा मीमांसा और वेदान्तदर्शन छः प्रमाण (अर्थापत्ति और अनुपलब्धि को जोड कर) छः प्रमाण स्वीकार करते हैं।[2] सूतसंहिता में भी छः प्रमाण स्वीकृत हैं- प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि प्रमाण। सूतसंहिता के परिप्रेक्ष्य में शब्दप्रमाण की चर्चा का इस शोधपत्र में विधान किया जा रहा है।

प्रमाण

प्रमाणज्ञान के सम्बन्ध में सूतसंहिता का प्रतिपादन है कि कालवश सुखदुःखादिहेतुभूत पुण्यापुण्यकर्मफल के कारण चित्त भी प्रमाण, भ्रान्ति और सन्देहादि भेद से बहुविध है-

प्रमाणभ्रान्तिसन्देहाद्याकारेण मुनीश्वराः।
बहुरूपं भवेच्चित्तं कालकर्मविपाकतः॥[3]

सूतसंहितानुसार दोषरहित चक्षुरादीन्द्रियजन्य ज्ञान ही प्रमाण कहा गया है-

अदुष्टकरणोत्पन्नं विज्ञानं मुनिपुङ्गवाः।
प्रमाणज्ञानमित्युक्तं मुनिभिः सूक्ष्मदर्शिभिः॥[4]

तर्कभाषा में प्रमा का असाधारण कारण प्रमाण कहा गया है। यथार्थानुभव ही प्रमा है- प्रमाकरणं प्रमाणम्। यथार्थानुभवः प्रमा।[5] फलतः यथार्थज्ञानप्रतिपादक प्रमाण होता है। न्यायशास्त्र में जिस साधन से प्रमाता प्रमेय का ज्ञान करता है, वह प्रमाण कहा गया है- स येनाऽर्थं प्रमिणोति तत्प्रमाणम्।[6]

तर्कसंग्रह में जो वस्तु जैसी है, उसको उसी रूप में जानना यथार्थज्ञान कहलाता है। यथार्थज्ञान ही प्रमा है- तद्वति तत्प्रकारकोऽनुभवो यथार्थः स प्रमेत्युच्यते।[7]

संशय,भ्रान्ति एवं निश्चयात्मकज्ञान

दोषयुक्त इन्द्रियजन्यज्ञान भ्रमात्मक अथवा संशयात्मक होता है। दुष्टकरणवशात् किसी वस्तु में अन्य वस्तु का ज्ञान भ्रान्ति कहलाता है, दो कोटियों का अवलम्बिज्ञान संशय है-

दुष्टकारणविज्ञानं भ्रान्तिज्ञानं प्रचक्षते।
कोटिद्वयावलम्बि स्यात्संदेहज्ञानमास्तिकाः॥[8]

न्यायदर्शन में भी इन दोनों ज्ञान का प्रायः यही लक्षण है। यह यही है एवंभूत अनुभव निश्चयात्मक ज्ञान है-

इत्थमेवेदमित्येवं रूपं यत्स्फुरणं बुधाः।
प्रोक्तः सम्यग्दर्शनतत्परैः॥[9]

निश्चयात्मक ज्ञान अदुष्ट इन्द्रियों से ही सम्भव है। अतः प्रमाण का दोषरहित इन्द्रियजन्य-ज्ञानत्व ही संहिता को अभीष्ट है।

प्रमाणभेद

सूतसंहिता के अनुसार प्रमाण के छः भेद हैं-

प्रमाणज्ञानसामग्र्यः षण्मयाऽभिहिता बुधाः।
तत्रैकाऽभावविज्ञानसामग्री कथिता द्विजाः।
अन्या तु भावविज्ञानसामग्री परिकीर्तिता॥[10]

इनमें प्रथम भेद अभावज्ञानविषयक है और द्वितीय भावज्ञानविषयक है। इस प्रकार विषय के अभाव और भावरूप होने से प्रमाण भी मुख्यतः द्विविध हैं। अभावविषयक एक प्रमाण और भावविषयक पाँच प्रमाण हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति इत्यादि प्रमाण भावविषयक

---

[1] तर्कभाषा, शिवबालक द्विवेदी, पृ.- 20
[2] तर्कभाषा, शिवबालक द्विवेदी, पृ.- 21
[3] सूतसंहिता- 4/10/8
[4] सूतसंहिता- 4/10/10
[5] तर्कभाषा, चौखम्बा प्रकाशन, तृतीय संस्करण, 1967, पृ.-13-14
[6] वात्स्यायनभाष्यम्- 1/1/1
[7] तर्कसंग्रह
[8] सूतसंहिता- 4/10/19
[9] सूतसंहिता- 4/10/12
[10] सूतसंहिता- 4/10/13,14

हैं और अनुपलब्धिप्रमाण अभावविषयक है।

प्रमाणस्वीकृति

पौराणिक दर्शन के प्रसंग में तत्त्वज्ञान के लिए प्रमाण अपेक्षित है। अतः पौराणिकसम्प्रदाय प्रत्यक्ष से ऐतिह्यपर्यन्त आठ प्रमाण स्वीकार करता है-

त्रीण्येव प्रमाणानि पठितानि सुपण्डितैः।
प्रत्यक्षं चाऽनुमानं च शब्दं चैव तृतीयकम्।
चत्वार्येवेतरे प्राहुरूपमानभूतानि च।
अर्थापत्तियुतान्यन्ये पञ्च प्राहुर्महाधियः॥
सप्तपौराणिकाश्चैव प्रवदन्ति मनीषिणः।[11]

देवीभागवत में सम्भवप्रमाण की चर्चा नहीं की गई है। सूतसंहिता यद्यपि पुराण का भाग है तथापि वेदान्तसम्मत छः प्रमाण ही यहाँ स्वीकार किये गये हैं।[12] प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति एवं अनुपलब्धि षड्विधप्रमाण ही यहाँ स्वीकृत हैं।

शब्दप्रमाण

वेदान्तपरिभाषा में तात्पर्ययुक्त शब्दजन्यज्ञान ही 'शब्द' कहा गया है- ज्ञानकरणाजन्याभावानुभवासाधारणकारनमनुपलब्धिरूपं प्रमाणम्।[13] सूतसंहिता के टीकाकार माधवाचार्य के अनुसार तात्पर्यलिङ्गयुक्तशब्द से अभिधेयविषयक जो ज्ञान है, वह ही शब्दप्रमाण है-

उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वताफलम्।
अर्थवादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यानिश्चये॥

इत्येवंभूततात्पर्यलिङ्गोपेताच्छब्दाद्यादभिदेयगोचरं ज्ञानं तच्छाब्दं प्रमाणमित्यर्थः।[14] वेदान्त में वह वाक्य प्रमाण है, जिसका तात्पर्यविषयसंसर्ग अन्यप्रमाणों से बाधित नही होता है- 'यस्य वाक्यस्य तात्पर्यविषयीभूतसंसर्गो मानान्तरेण न बाध्यते तद्वाक्यं प्रमाणम्।'[15] न्यायदर्शन आप्तोपदेश को शब्दप्रमाण स्वीकार करता है, यथादृष्टार्थोपदेशेच्छाप्रवृत्त उपदेष्टापुरुष एव 'आप्त' उच्यते।[16] 'आप्तोपदेश शब्दः। आप्तः खलु साक्षात्कृतधर्मा यथादृष्टस्यार्थस्य चिरव्यापयिषया प्रयुक्त उपदेष्टा।'[17]

शब्दप्रमाण के भेद

सूतसंहिता में शब्दप्रमाण के तीन भेद हैं- अक्षर,पद और वाक्य।

शब्दस्तु ब्रह्मविच्छ्रेष्ठास्त्रिविधः परिकीर्तितः।
अक्षराणि तथा विप्राः पदानि च तथैव च॥
वाक्यानि चेति तत्रापि केषाञ्चिद् द्विजपुङ्गवाः॥[18]

उपर्युक्त त्रिविध शब्दप्रमाण के भेदों में कुछ आचार्यों के मत में अक्षर ही अर्थ के वाचक हैं। टीकाकार के मत में भाष्यकार पतञ्जलि अक्षर का अर्थवाचकत्व करते हैं- 'वर्णा एव तु शब्दः इति भगवानुपवर्षः।'[19] कुछ आचार्यों के मत में पद ही अर्थ का वाचक है- अर्थानामपि केषाञ्चिदान्यमेव द्विजोत्तमाः।[20]

स्फोटवादी आचार्य पद को अर्थाभिधायक स्वीकार करते हैं।[21] भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में प्रतिपादन किया है-

नादैराहितबीजायामन्त्येन ध्वनिना सह।
आवृत्तिपरिपाकायां बुद्धौ शब्दोवतार्यते॥[22]

अर्थात् नाद से ध्वनि में एक भावना उत्पन्न होती है, पुनः आवृत्ति के द्वारा उसमें कार्य उत्पन्न करने की शक्ति उत्पन्न होती है। इस स्फोटवादी पदस्फोट ही अर्थ का वाचक है ऐसा स्वीकार करते हैं।। उनके मत में अक्षर केवल उसकी अभिव्यक्ति का हेतु है। अतः तदर्थाभिधायकं न तदभिव्यक्तिहेतवोनार्थाभिधायका इति।[23]

कुछ आचार्यों के मत में वाक्य भी अर्थ का वाचक है-

वाचकानि च वाक्यानि तथैव ब्रह्मवित्तमाः।
अर्थानामपि केषाञ्चित्प्रमाणानि प्रदीपवत्॥[24]

अक्षरों के समूह को पद तथा पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। पद एकाक्षर तथा अनेकाक्षर के भेद से द्विविध है। वाक्य भी प्रधान और गौण के भेद से दो प्रकार का होता है-

भवन्त्येकाक्षराण्येव पदानि मुनिपुंगवाः।
अक्षराणि च संभूय पदानि स्यिस्तथैव च॥
पदानां समुदायस्तु भवेद्वाक्यं द्विजोत्तमाः।
प्रधानं गुणभूतश्च द्विविधं वाक्यमीरितम्॥[25]

महावाक्य को प्रधान वाक्य एवं उसके शेष अर्थ को प्रतिपादित करने वाले अप्रधान वाक्य को गौणवाक्य कहते हैं। प्रधान और गौणवाक्य भी एकार्थ की विवक्षा से एकत्वभाव को प्राप्त करते हैं[26]।

वाक्य भी विधि, निषेध और सिद्धार्थबोधक से तीन प्रकार के होते हैं। इनमें विधिवाक्य और निषेधवाक्य क्रियाविषयक होते हैं। ये दोनों वाक्य क्रिया का ही विधान या निषेध करते हैं। विधिवाक्य का स्वरूप है- 'अग्निहोत्रं जुहुयात्', निषेधवाक्य है- 'न कलञ्जं भक्षयेत्' और सिद्धार्थवाक्य है- 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म।' 'पुत्रस्ते जातः' सिद्धार्थबोधकवाक्य के भी दो भेद हैं- लौकिकवाक्य और वैदिकवाक्य। सिद्धार्थबोधक लौकिकवाक्य के भी दो भेद हैं- प्राप्तप्राप्तिपरक वाक्य एवं निवृत्तदोषपरक वाक्य। इसमें 'कण्ठे हारः' यह प्राप्तप्राप्तिपरक वाक्य है

11 देवीभागवतम्- 1/9/23-25
12 सूतसंहितामीमांसा, पृ.-141
13 वेदान्तपरिभाषा, पृ.-344
14 सूतसंहिता, तात्पर्यदीपिका टीका- 4/10/18
15 वेदान्तपरिभाषा, पृ.-169
16 सूतसंहितामीमांसा, पृ.-147
17 न्यायसूत्रम्, वात्स्यायनभाष्यम्- 1/1/7
18 सूतसंहिता- 4/10/18,19
19 सूतसंहिता, तात्पर्यदीपिका टीका- 4/10/19
20 सूतसंहिता- 4/10/20
21 सूतसंहितामीमांसा, पृ.-147
22 वाक्यपदीयम, ब्रह्मकाण्ड- 84
23 सूतसंहिता, तात्पर्यदीपिका टीका- 4/10/20
24 सूतसंहिता- 4/10/21
25 सूतसंहिता- 4/10/22-23.
26 सूतसंहितामीमांसा- पृ.-148

और 'न शुद्धस्त्वम्' यह निवृत्तदोषपरक वाक्य है।[27]

उपसंहार

प्रत्यक्षादि पाँच प्रमाणों से परात्परशिव का बोध असम्भव है। क्योंकि समस्त प्रमाण अनात्मविषयक हैं। शिव साक्षात्, परमात्मा और सर्वान्तर्यामी है। अतः उस परात्पर शिव के अनात्मविषयकप्रत्यक्षादि प्रमाण कैसे बोधक हो सकते हैं? सूतसंहिता के मत में शब्दप्रमाण ही प्रत्यगात्मशिव का बोधक है किन्तु उस शब्दप्रमाण का भी लौकिक सिद्धार्थबोधकवाक्यों में 'तुम्हारा पुत्र उत्पन्न हुआ' इत्यादि में अनात्मविषयक होने से शिवज्ञान में अप्रामाण्य है। सिद्धार्थबोधक उपनिषद्वाक्यों के द्वारा ही शिव का साक्षात्बोध सम्भव है। सूतसंहिता के उपर्युक्त प्रमाण विवेचन में फलश्रुति के रूप में शब्दप्रमाण को परमशिव का साक्षत्बोधक कहा गया है। पुराणात्मक स्वरूप को धारण करते हुए भी सूतसंहिता पुराणसम्मत 'सम्भव' और 'ऐतिह्य' की चर्चा प्रवृत्त प्रसंग में उपादेय न मानकर नहीं करती है[28]।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

1. सूतसंहिता- तात्पर्यदीपिकोपेता. दक्षिणामूर्तिमठ प्रकाशन, वाराणसी. सन् 1999.
2. झा, रमाकन्त. सूतसंहितामीमांसा. चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी. सन् 2005.
3. केशवमिश्र. तर्कभाषा. सम्पादक- डॉ. शिवबालक द्विवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर. सन् 2013.
4. अन्नम्भट्ट. तर्कसंग्रह. सम्पादक- गोविन्दाचार्य, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, सन् 2013.
5. भर्तृहरि. वाक्यपदीयम् (ब्रह्मकाण्डम्). सम्पादक- डॉ. शिवशंकर अवस्थी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी. सन् 2013.
6. धर्मराजध्वरीन्द्र. वेदान्तपरिभाषा. सम्पादक- प्रो. पारसनाथ द्विवेदी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, सन् 2014.
7. न्यायदर्शन (वात्स्यायन भाष्यसहित). अनु. ठाकुर उदय नारायणसिंह, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, सन् 2015.
8. देवीभागवत. सम्पादक- पोद्दार हनुमानप्रसाद, गोविन्दभवन कार्यालय गीताप्रेस, गोरखपुर, सम्वत् 2043.

[27] सूतसंहिता- 4/10/18-36

[28] सूतसंहितामीमांसा, पृ.150